❀ श्री रामाय नमः ❀

अनुपम उपहार

ब्रह्म गायत्री मंत्र में श्री रामतत्त्व

श्री स्वामी रामनारायणदास शास्त्री
(लेखक व प्रकाशक)
श्री स्वामी शीतलदास जी का स्थान अस्सी, काशी
संशोधक
श्रीमान् डा० योगीराज 'गोवत्स'
श्री गरुड आश्रम, श्रवणनाथ नगर, हरिद्वार

[प्रथमावृत्ति—मार्च १९६५]   [मूल्य १५ पैसे

श्री गणेशाय नमः

श्री रामाय नमः

❀ ब्रह्म गायत्री मंत्र में श्री राम तत्त्व ❀

अथ ध्यानम्

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्ट दोहं,
तीर्थास्पदं शिवविरिञ्चि नुतं शरण्यम्
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धि पोतं
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥

सूचना—संस्कृत में गायत्री शब्द का व्यवहार तीनों लिङ्गों में होता है—

पुंलिङ्ग में—गायन्तं त्रायते, इति गायत्रं=स्तोत्रमस्ति, अस्येति विग्रहे। गायत् शब्दः शतृ प्रत्ययान्तः, त्रै धातोः, "अत इनिठनौ" इति सूत्रेण 'इन्' प्रत्यये "आदेच उपदेशेऽशिति" इति सूत्रेण आत्वे "आतो लोप इटि च" इति सूत्रेणाकार लोपे कृते, "सौच" इति सूत्रेण इकार दीर्घे कृते 'गायत्री' इति रूपं सिध्यति।

(उद्गाता, खदिरवृक्षः, इतिद्वावर्थौ भवतः)।

स्त्रीलिङ्ग में—गायन्तं त्रायते यस्मात्सा गायत्री तने सोच्यते, इति विग्रहे। गायत्+त्रै धातोः "आतोऽनुप सर्गेकः" इति सूत्रेण क प्रत्ययेऽनुबन्ध लोपे, आत्वे, लोपे च कृते, गौरादित्वात् (ङीषि) 'गायत्री' इति रूपं सिध्यति।

नपुंसकलिङ्ग में—गायन्तं त्रायते यस्मात् तद् ब्रह्म इति विग्रहे। गायत्+त्रै+णिनि प्रत्यये, आत्वे, लोपे च कृते, "सौच" इति दीर्घे "गायत्री" इति सिध्यति।

अत्र ब्रह्मन् शब्दस्य नपुंसकत्वात् तत्प्रतिपादकः 'गायत्री' शब्दोऽपि नपुंसकः। छान्दसत्वात् न सुपोलुक्, तस्मान्नपुंसकत्वेऽपि गायत्री शब्द एव भवति।

गायत्री मंत्र पर अनेकों मत देखे जाते हैं, और उसकी उपासना भी अनेक भावों में की आती है। जिस की जैसी रुचि होती है, वैसे ही गायत्री का उपयोग कर सकता है, यह कोई भी हठ नहीं कर सकता कि गायत्री उसी भाव में उपयोग की जा सकती है। कुछ विद्वान् गायत्री को देवी अर्थ में मानते हैं। कुछ विद्वान् गायत्री को परात्पर ब्रह्म मानकर उपासना करते हैं। ये सभी पृथाएं लोक में प्रचलित हैं। उन सब बातों को सामने रख कर गायत्री मंत्र पर और भी विचार (परामर्श) किया जा सकता है।

जिस मंत्र का मंत्रार्थ होता है, और उसी मंत्र को आधार मानकर उपासक उस मन्त्र की उपासना करता है। यहां भी यह प्रश्न खड़ा होता है, कि गायत्री मंत्र का मंत्रार्थ क्या है ? इस सम्बन्ध में बहुत से विद्वान् मन्त्र से विभिन्न अर्थ निकाल कर अपनी अपनी उपासनाएं सिद्ध कर सकते हैं, इस से हमें कोई आपत्ति नहीं, परन्तु वस्तुत: गायत्री मंत्र का मंत्रार्थ ठीक रूप से क्या है ? और उस में कौन सी उपासना ठीक रूप से चल सकती है, यह विचारणीय विषय है।

इस बीच में यह और भी प्रश्न उठता है, कि जितने भी मंत्र होते हैं, उनके नाम अलग अलग होते हैं, और उन मन्त्रों के मुख्य देवता का ज्ञान भी हो जाता है, जैसे—राममन्त्र, कृष्ण मन्त्र, शिवमन्त्र, नारायण मन्त्र, देवी मन्त्र, गणेश मन्त्र, सूर्य मन्त्र इत्यादि।

इन मन्त्रों से स्पष्ट मन्त्रों के देवताओं का ज्ञान हो जाता है, ऐसे ही गायत्री मन्त्र के नाम से भी मन्त्र के देवता का ज्ञान होना चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं होता, गायत्री जो नाम है, उससे एक ऐसी उलझन पड़ जाती है कि उसका समाधान विवाद में आ जाता है। इस लिये गायत्री शब्द के कोषों में अनेक अर्थ हैं—

अमरकोष में खदिर वृक्ष (कत्था का पेड़ है) गायत्री का नाम है। निरुक्त और ऋग्वेद में उद्गाता (सामवेद का गायक) गायत्री का नाम है। शब्द कल्पद्रुम में चतुर्मुख ब्रह्मा की पत्नी गायत्री का नाम है। परन्तु ये सब नाम गायत्री मन्त्र के अर्थ में घटित नहीं होते।

यदि गायत्री को खदिर वृक्ष मान लिया जाय तो पेड़ की उपासना सिद्ध होती है, यह अमान्य मानी जाएगी कोई भी विद्वान् गायत्री को पेड़ मानकर उपासना नहीं करेगा क्योंकि वह कल्याण-पथ में नहीं आ सकता, इस तरह उद्गाता की भी उपासना लोक में नहीं की जा सकती, इसी तरह ब्रह्मा की पत्नी की भी उपासना लोक में नहीं मानी जायेगी, और फिर मंत्र से देवी परक अर्थ भी नहीं निकलता है। गायत्री शब्द का अर्थ अध्यात्म में आत्मा का प्रयोग किया जाता है, परन्तु अध्यात्म में आत्मा को लेकर के गायत्री की उपासना लोक में उपयोग नहीं देखी जाती है। गायत्री शब्द का अर्थ ब्रह्म वाची भी है।

इन सब कठिनाइयों से यह कहना कठिन हो जाता है कि गायत्री मंत्र अमुक देवता से सम्बन्धित है, क्योंकि नाम के आधार पर गायत्री के देवता का चुनाव नहीं होता अर्थात् खदिर वृक्ष की उपासना, सामगायक की उपासना अथवा ब्रह्मा की पत्नी की उपासना मंत्रार्थ में सिद्ध नहीं होती है।

गायत्री शब्द छन्द वाचक भी है :—

जिस छन्द का मंत्र रूप में जप किया जाता है, वह गायत्री मन्त्र तीन काण्डों में विभक्त है, अर्थात् इन तीन पदों में तीन भावनाएं की जाती हैं ज्ञान, उपासना (भक्ति) और कर्म, इस विषय में मैत्रायणी श्रुति का प्रमाण :—"तत्सवितुर्वरेण्यम्" इत्यसौ वा आदित्यः सविता स वा एवं प्रवर्णीयः आत्मकामेन इत्याहुर्ब्रह्मवादिनः, प्रत्यगात्मत्वं ज्ञान काण्डोक्तः। उस परात्पर ब्रह्म को व्यापक रूप में समझे अर्थात् वह प्रत्येक प्राणियों में रमण कर रहा है। "भर्गो देवस्य धीमहि" इति सविता वै देवस्ततो योऽस्य भर्गस्तं चिन्तयामि, इत्याहुर्ब्रह्मवादिनः, चितयामीति चिन्ता योग्यत्वमुपासना काण्डोक्तः। दिव्यगुण विशिष्ट परात्पर परमात्मा श्री राम को सिंहासना रूढ़ हृदयंगम करते हुए उपासना (भक्ति) करे। "धियो यो नः प्रचोदयात्" इति बुद्धियो वै धियस्ता योऽस्माकं प्रचोदयात, इत्याहुर्ब्रह्मवादिनः, धियः अनेक प्रकार प्रेरकत्वं कर्म-

काण्डोक्त: । इस मंत्र को वेदमाता गायत्री कहते हैं, और दूसरे को नहीं । इस प्रकार चिन्तन करने से मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाता है, शान्तिदायक उत्साह एवं आत्मबल बढ़ाने वाला होता है ।

वेदों के विषय में विमर्श

वेदों के बिषय में बहुत कुछ विवाद चला आ रहा है, हमारे भारतीय विद्वान् वेदों को अपौरुषेय मानते हैं अर्थात् किसी पुरुष के बनाये हुए नहीं हैं, और पाश्चात्य विद्वान् वेदों को पौरुषेय (पुरुषकृत) बताते हैं।

प्राचीन भारतीय विद्वानों का विश्वास है कि परात्पर परमात्मा से वेदों की उत्पत्ति हुई है, इस सम्वन्ध में निम्नलिखित कुछ प्रमाण हैं—

"यो ब्रह्माणं विद्धाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै"

(श्वेताश्वेतर उपनिषद् अ. ६, मं. १८)

अर्थ—जिस परमात्मा ने सृष्टि के आदि में प्रजापति ब्रह्मा को उत्पन्न किया, उन्होंने उन वेदों को पढ़ाया ।

"आशयच्चामृतं देवान् वेदमध्यापयद् विधिम्"

(व्याकरण शास्त्र द्वितीय कारक)

अर्थ—उस परमात्मा हरि ने देवताओं को अमृत पिलाया और ब्रह्मा जी को वेदों का अध्ययन कराया ।

इस प्रसंग में यह एक प्राचीन आख्यायिका चली आ रही है कि वेदों की माता गायत्री मंत्र है और इस कारण से गायत्री मंत्र को ही वेद माता गायत्री कहा जाता है ।

प्राचीन विद्वानों का इस आशय में ऐसा अनुमान हो सकता है और हुआ भी होगा कि अनादि युगों में परमात्मा ने पितामह ब्रह्मा को इस गायत्री मंत्र का उपदेश दिया था । वही उपदेश महान् वेद रूप में था, और आगे चलकर वही वेद लोक में सूक्तों के रूप में मूर्तमान (व्यक्त) हुआ । अतः गायत्री मंत्र ही वेद सिद्ध हुआ ।

गायत्री मन्त्र के आधार पर श्री रामायण की रचना हुई

प्राचीन ऋषि परम्परा में गायत्री मन्त्र को महान् वेद रूप में

स्वीकार किया गया है, इसी से श्री बाल्मीकि जी ने गायत्री मन्त्र को आधार बनाकर चौबीस अक्षरों पर चौबीस हजार श्लोकों में श्री रामायण महाकाव्य की रचना की है।

चतुर्विंशत्सहस्राणि श्लोकानामुक्तवानृषिः ।
तथा सर्गशतान् पंच षट्काण्डानि तथोत्तरम् ॥
(वा० रा० बा० का० सर्ग ४, श्लोक २)

अर्थ :—श्री बाल्मीकि जी ने पांच सौ सर्ग, सात काण्ड और चौबीस हजार श्लोकों को कहा है।

उपर्युक्त कथन से गायत्री मन्त्र और श्री रामायण दोनों एक ही वस्तु सिद्ध होती है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि श्री रामायण के द्वारा और गायत्री मन्त्र के द्वारा जाना गया तत्त्व भी एक ही है। गायत्री मंत्र श्री रामायण का ही सूक्ष्मतर रूप है। श्री रामायण के द्वारा परात्पर श्री राम की ही उपासना सिद्ध हुई।

इसके अतिरिक्त यह भी प्रमाणित होता है कि जैसे—गायत्री मंत्र को वेद माता कहा गया है अर्थात् जैसे—गायत्री मन्त्र से वेदों की उत्पत्ति हुई है, उसी प्रकार गायत्री से रामायण की भी उत्पत्ति हुई है, अतः रामायण और वेद एक ही है। इसके समर्थन में अगस्त्य संहिता का वचन है :—

"वेद वेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदः प्राचेतसादासीत् साक्षाद् रामायणात्मना ॥
तस्माद् रामायणं देवि ! वेद एव न संशयः ॥"

अर्थ—वेदों से जानने योग्य परात्पर परमेश्वर राम जब दशरथ जी के घर पुत्र रूप में अवतीर्ण हुए, तब श्री बाल्मीकि जी के मुखारविन्द से रामायण के रूप में साक्षात् वेद ही उत्पन्न हुए। इस कारण से हे देवि ! रामायण को ही तुम वेद जानो इसमें कुछ संशय नहीं।

इस प्रकार सम्पूर्ण रामायण के द्वारा परात्पर परब्रह्म मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम जी के चरित्र का वर्णन हुआ है, अब यहां यह स्वतः सिद्ध हो जाता है कि श्री रामायण के विस्तृत विवेचन का आधार भूत जो

बीज रूप गायत्री मन्त्र है, उसमें भी सूक्ष्म रूप से मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का चरित्र ही वर्णन है। अतः यह सिद्ध होता है कि गायत्री मन्त्र के द्वारा मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम जी के परात्परत्व का बोध होता है अर्थात् गायत्री मन्त्र में श्री राम की ही उपासना है, किसी दूसरे की नहीं।

छन्दो गायत्र संज्ञं च श्री रामश्चैव देवता (श्रीराम रहस्योपनिषद्)

अर्थ—गायत्री छन्द परक है, श्रीराम जी देवता है, विश्वामित्र ऋषि है।

मन्त्र शब्द का अर्थ—जो मन को त्राण (रक्षा) करे उसको मन्त्र कहते हैं, एवं जो मन्त्र गान अथवा पाठ करने से गायक या पाठक को त्राण करे उस मन्त्र को गायत्री मन्त्र कहते हैं।

ब्रह्म गायत्री मन्त्र का अन्वयार्थ

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य, धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्

अन्वय—तत् सवितुः देवस्य भर्गः धीमहि यः नः धियः प्रचोदयात्।

हिन्दी—वह परात्पर ब्रह्म सविता के रूप (सूर्य के रूप) में व्यक्त हुआ, उसी देव (राम) की उपासना करने योग्य भर्ग (ज्योतिमय स्वरूप हिरण्य गर्भ परमात्मा) का (हम लोग) सुख शान्ति के लिए ध्यान करते हैं, वही प्रकाशमय परमात्मा हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों में प्रेरित (प्रवृत) करें।

गायत्री मन्त्र की व्याख्या

तत्=वह परात्पर ब्रह्म।

सवितुः=जगत्स्रष्टुः, सविता रूप जगत् स्रष्टा का

‘सविता सर्वभूतानां सर्वभावान् प्रसूयते।
सवनात् पावनाच्चैव सविता तेन चोच्यते॥’

(इति याज्ञवल्क्यः)

अर्थ :—सविता संपूर्ण भूत प्रणियों का और सर्बभावों (रसों) का

उत्पन्न करता है, सवन (प्रसव) और पवित्र (पोषण) करने से उस को सविता कहते हैं।

षूङ् प्राणि प्रसवे धातोः, सूयते चराचरंविश्वमिति विग्रहे, सविता रूपं सिध्यति। षूङ् धातु से प्राणियों के उत्पादक अर्थ में सविता शब्द बना है।

देवस्य=दिव्यगुण विशिष्टपुरुषस्य (श्री रामस्य) दिव्यगुण विशिष्ट पुरुष श्री राम जी का।

"दीव्यते क्रीडते यस्माद् द्योतते रोचते दिवि।
तस्माद् देव इति प्रोक्तः स्तूयते सर्वदेवतैः॥"

(इति याज्ञवल्क्यः)

अर्थ—जो जगत् की सृष्टि स्थिति प्रलय रूप क्रीडा करता हुआ आकाश में देदीप्यमान सुशोभित होता है, और सब देवों से उस की स्तुति की जाती है, इस कारण से उसे देव कहते हैं।

दीव्यति रमतेऽन्तर्यामित्वेन सर्व भूतेषु स्वात्मनीति देवः।

अर्थ—जो अन्तर्यामी रूप से संपूर्ण भूत प्राणियों में रमण करता है उसे देव कहते हैं।

यद्वा—दीव्यन्ति रमन्ते योगिनो यस्मिन्निति देवः।

अर्थ—जिस में सब योगी लोग रमण करते हैं उसे देव कहते हैं।

यद्वा—देवयति जन्मादि दातृत्वेन रमयति भूतानीति देवः।

अर्थ—जो सब भूत प्राणियों को जन्मादि दाता रूप से रमण कराता है, उसे देव कहते हैं।

यद्वा—देवयति प्रलये स्वकुक्षौ स्वापयति भूतानीति देवः।

अर्थ—संपूर्ण भूत प्राणियों को प्रलयकाल में अपने कुक्षि में सुला लेता है, उसे देव कहते हैं।

यद्वा—चराचरे दीव्यति द्योतते व्याप्नोतीति देवः।

अर्थ—चराचर में व्याप्त हो कर दीप्तिमान हो रहा है, उसे देव कहते हैं।

यद्वा—दीव्यते स्तूयते ब्रह्मपुरः सरैः सुरैरिति देवः।

यद्वा—दीव्यति प्रकाशयति मोदयति खलु-आनन्दयति सर्व विश्वमिति स देवः।

अर्थ—जो संपूर्ण विश्व को प्रकाश एवं आनन्द देता है, और ब्रह्मा आदि देवताओं से जिस की स्तुति की जाती है, ऐसा वह देव पुरुष है।

दिवु क्रीडायां धातु से क्रीडार्थ में देव शब्द बना है।

रमु क्रीड़ायां धातु से क्रीडार्थ में राम शब्द बना है।

अतः दोनों धातु क्रीडार्थ में प्रतिपादित होने से देव शब्द भी श्री राम का ही बोधक है, इस लिये देव शब्द श्री राम ही हैं, दूसरा नहीं।

वरेण्यम्=श्रेष्ठतमवरणीयमुपासनीयञ्च। श्रेष्ठतम वरण(उपासना) करने योग्य। वृञ् वरणे धातु से 'वरेण्यं' बना है।

भर्गः=सर्व पापानां संसारस्य च भर्जन समर्थश्च, आदित्यमण्डलगत शुद्ध ज्योतिर्मयो हिरणगर्भः मरमात्मा।

भ्रस्ज पाके धातु से अथवा मृजी भर्जने धातु से भर्गः बना है।

"भ्रस्ज पाके भवेद् धातुर्यस्मात्पाचयते ह्यसौ।
भ्राजते दीप्यते यस्माज् जगच्चान्ते हरत्यपि॥"

(इति याज्ञवल्क्यः)

अर्थ—भ्रस्ज पाके धातु पकाने अर्थ में है, अत सब पापों को मर्जन (भस्म) कर के भक्त जनों के जन्म मरणादि दुःखों को दूर कर देता है जगत् को पालन पोषण करते हुए अपने तेज से सुशोभित होता है और फिर अन्त में अपने तेज से इस जगत् का संहार कर लेता है, इस कारण से उस को भर्ग कहते हैं।

"कालग्निरूपमास्थाय सप्तार्च्चिः सप्तरश्मिभिः।
भ्राजते तत्स्वरूपेण तस्माद् भर्गः स उच्यते॥"

(इति याज्ञवल्क्यः)

अर्थ—कालाग्नि रूप में स्थित सप्तज्वालाओं एवं सात रश्मियों के द्वारा वह अपने सहज स्वरूप से प्रकाशित होता है, इस कारण से उसे

भर्ग कहा जाता है।

"भेति भीषयते लोकान् रेति रञ्जयते प्रजाः।
गेत्यागच्छत्यजस्रं यो भगवान् भर्ग उच्यते॥"

(इति याज्ञवल्क्यः)

अर्थ--भकार से सब लोगों को भयभीत करता है, रकार से प्रजाओं को प्रसन्न करता है, गकार से जो निरन्तर आगमन करता है, इस कारण से उसको भर्ग कहते हैं।

"य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्यमयः पुरुषो दृश्यते"

(छान्दोग्य उपनिषद् अ० १, खं० ६, मन्त्र ६)

अर्थ—जो यह सूर्यमण्डल में हिरण्यमय (स्वर्णमय=प्रकाशमय) पुरुष दीखता है, वही भर्ग है।

य एष एतस्मिन् मण्डले पुरुषः

(वृहदारण्यक उपनिषद् अ० २, ब्रा० ३, मं० ३)

अर्थ—जो यह सूर्यमण्डल में पुरुष है, वही भर्ग है।

वह कौन पुरुष है? जो कि सूर्यादि सब लोकों का प्रकाशक है, इस विषय में ऋषियों ने प्रकाश डालते हुए, सनत्कुमार संहितान्तर्गत नारदोक्त रामस्तव राजश्लोक २८-४९ में लिखा है--

"भर्गं वरेण्यं विश्वेशं रघुनाथं जगद्गुरुम्।
सूर्यं मण्डलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम्॥"

अर्थ—सूर्य मण्डल में स्थित जो भर्ग (तेजोमय) स्वरूप जगत् के गुरु श्रेष्ठतम वरण (उपासना) करने योग्य, सब पापों के नाशक विश्व के ईश (प्रभु) श्री सीता सहित रामरघुनाथ जी का ध्यान एवं उपासना करनी चाहिये। इस उपर्युक्त प्रमाण से श्री सीताराम जी सूर्यमण्डस्थ, श्री गायत्री मन्त्र में श्रीराम का परात्परत्व ही सिद्ध होता है।

धीमहि=ध्येय तया मनसा धारयेम। सुख शांति के लिये हम लोग ध्यान करते हैं। ध्यै चिन्तायां धातु से 'धीमहि' बना है।

नः=अस्माकम्—हम लोगों की
धियः=बुद्ध्यः —बुद्धियों को
प्रचोदयात=धर्मादि लौकिक पारलौकिक कार्येषु प्रेरयेत् ।
धर्मादि कार्यो मे प्रेरित (प्रवृत्त) करावें ।
' चिन्तयामो वयं भर्गं धियो यो नः प्रचोदयात् ।
धर्मार्थकाममोक्षेषु बुद्धि वृत्तीः पुनः पुनः ॥"
(इति याज्ञवल्क्य)

अर्थ—हम सब उसके तेज का ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धि वृत्तियों को धर्म अर्थ काम मोक्ष में बारम्बार प्रेरणा करें ।

"वरेण्यं वरणीयञ्च संसार भय भीरुभिः ।
आदित्यान्तर्गतं यच्च भर्गाख्यं वै मुमुक्षुभिः ॥
जन्ममृत्यु विनाशाय दुःखस्य त्रिविधस्य च ।
ध्यानेन पुरुषो यस्तु दृश्यः स सूर्यमण्डले ॥"
(इति याज्ञवल्क्यः)

अर्थ—अनेक प्रकार के दुःख एवं जन्म मृत्यु के विनाश के लिए, जो वह परात्पर पुरुष सूर्यं मण्डल में दीखता है, उसको संसार से भयभीत हुए मुमुक्षु जन वरण (उपासना) एवं ध्यान करें ।

उपासना क्षेत्र में सगुण ब्रह्म का गान वेदों ने किया है, अतः यह सिद्ध हुआ कि गायत्री मन्त्र एवं वेद इन्ही श्री सीताराम जी का प्रतिपादन करते हैं ।

मनुष्य देह रूप वृक्ष के धर्म अर्थ काम मोक्ष ये चार पदार्थ फल हैं, वे चारों फल उस परात्पर परमात्मा राम की भक्ति से ही मनुष्य को प्राप्त होते हैं । इस लिये राम की उपासना एवं ध्यान करें ।

'वेद्यं पवित्रमोंकारम्, प्रणवः सर्व वेदेषु' (गीता)

अर्थ—पवित्र ॐकार को वेदों में प्रणव कहा गया है ।

प्रणव शब्द का अर्थ—प्रकर्षेण नूयते स्तूयते परब्रह्म अनेनेति प्रणवः । जिससे परब्रह्म की स्तुति की जाती हो, उसको ही प्रणव कहते हैं ।

'राम' से ही प्रणव की निष्पत्ति हुई है।

'रकारो गुरुराकारस्तथा वर्ण विपर्ययः।
मकारो व्यञ्जनं चैव प्रणवश्चाभिधीयते॥'

(इति महारामायणे)

अर्थ—रेफ, दीर्घ आकार, ह्रस्व अकार और मकार इन वर्णों को वर्ण विपर्यय कर देने से ही प्रणव कहा जाता है।

जिस प्रकार व्याकरण द्वारा 'हिंसः' इसको वर्ण विपर्यय कर देने पर ही 'सिंहः' बना है।

उसी प्रकार राम शब्द का भी वर्ण विपर्यय करने पर ॐ बनता है। बनाने की क्रिया नीचे लिखी है—

'राम' इस पद को यहां (अ+अ+र्+म्) पर वर्ण विपर्यय कर दिया गया है। 'हशि च' इस सूत्र से रेफको 'उ' हो गया। आ+अ' को सवर्ण दीर्घ 'आ' हो गया, 'आ+उ+म्' को "आद्गुणः" इस सूत्र से 'आ+उ'को कण्ठ ओष्ठ स्थानिक 'ओ' गुण हो गया तब ॐ शब्द बना है, इसी को प्रणव कहते हैं।

प्रणवी शब्द का अर्थ—प्रणवोऽस्यास्तीति प्रणवी अर्थात् प्रणव की जिससे उपत्पत्ति होती है, उसको ही प्रणवी कहते हैं, इसलिए राम को प्रणवी ही कहते हैं।

'रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेद तत्त्वाधिकारिणः॥'

(इति महारामायणे)

अर्थ—मोक्ष दायक प्रणव की उत्पत्ति श्री राम जी से हुई है और वह राम वेद तात्पर्यार्थ बोधक तत्वमसि महावाक्य का स्वरूप है।

'राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः।
राम एव परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्म तारकम्॥'

(इति राम रहस्योपनिषद्)
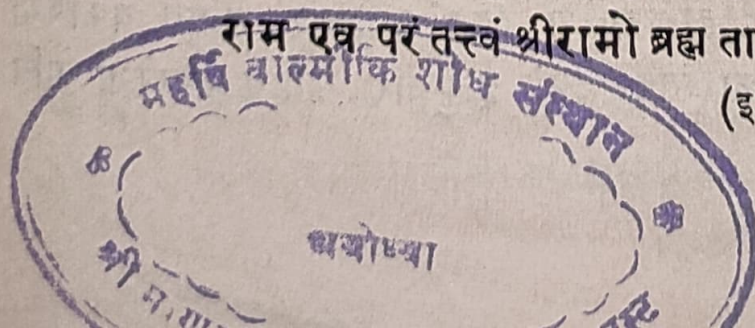
व्याहृतियों का विवेचन निम्न लिखित है—

उस राम के महा प्रभाव में व्याप्त व्याहृतियां विशेषण हैं, श्री राम जी ही भूरित्यादि लोकों को व्याप्त कर स्थिर हो रहे हैं।

भूर्लोक, भुवः =अन्तरिक्षलोक, स्वः=स्वर्गलोक, महर्लोक, जन-लोक, तप लोक, इन सात लोकों में श्रीराम ही सर्वव्यापक रूप में सर्वत्र विराजमान है। ऐसा समझकर भगवान् का विराट् रूप का ध्यान एवं उपासना करें।

अथवा—भगवान् के चरण में भूर्लोक है, नाभि में भूवर्लोक है, वक्ष स्थल में स्वर्गलोक है, ग्रीवा में महर्लोक है, शरीर में जनलोक है, कण्ठ में तप लोक है, और शीर्ष (मस्तक) में सत्य लोक है, इन सात विशेषणों व्याहृतियों) से युक्त श्री राम का ध्यान एवं उपासना करे।

जगत् सप्तावरण स्वरूप—पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, अहंकार और महतत्त्व, ये विराट् ब्रह्माण्ड में प्रकाशित करता है तो उसके तेज कैसा है?

'आपो ज्योतिर्रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम'

अर्थ—जल रूप, तेज रूप, रस (आनन्द) स्वरूप. अमृतम्=मृत्यु रहित, वह ब्रह्म भः भुवः, स्वः, इन त्रिपाद विभूतियों को व्याप्त कर लोकत्रय उपादान होने से लोक त्रयात्मक श्रीराम का ही रूप ॐ है। क्योंकि राम से ही ॐ की उत्पत्ति हुई है।

गायत्री मन्त्र में चौबीस अक्षर होते हैं, परन्तु 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' इत्यादि मन्त्र में २३ अक्षर है अत; जप काल में 'वरेण्यं' के स्थान पर 'वरेणियम्' ऐसा पाठ व्याहृत (कथित) देखा जाता है, अथवा—मन्त्र के आदि में ॐ शब्द लगा देने से पुनः छन्द में दोष नहीं होता।

अत्र तु पिंगल मुनि प्रणीतं पिंगलच्छन्दस्सूत्रम्—

यत्र छन्दसि अक्षर संख्या पूर्ति नं भवति तत्र यकारश्चेत्तर्हि, "इयादिः पाद पूरणः" इति सूत्रेण 'इय' इतीकार सहित यकारेण पूर्तिः कार्य्या। यत्र वकारस्तत्र 'उव' इत्युकार सहित वकारेण पूर्ति

कार्य्या। अनेन प्रमाणेन वरेण्यमित्यस्य स्थाने 'वरेणियम्' इति पाठात् चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री सिद्ध्यति। ननु वेदे तु लेखावलोकनेन वरेण्यमिति स्यात् पिंगल प्रमाणाच्च वरेणिय मिति तथा पिंगलानुरोधेन मूलेऽपि चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री कुतो नेतिचेच्छृणु—

"पाठकाले वरेण्यं स्याज्जपकाले वरेणियम्।
वरेण्यमिति यो ब्रूयात् स नरो ब्रह्मघातकः॥"

(इति ब्रह्मपुराणे)

गायत्री रामायणम्

अक्षर ★ बालकाण्डम् ★ सर्ग श्लोक

१. तत्=तपः स्वाध्याय निरतं तपस्वी वाग् विदांवरम्।
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनि पुङ्गवम्॥ १। १

२. स=स हत्वा राक्षसान्सर्वान् यज्ञघ्नान् रघुनन्दनः।
ऋषिभिः पूजितस्तत्र यथेन्द्रो विजये पुरा॥ ३०।२४-२५

३. वि=विश्वामित्रस्स रामस्तु श्रुत्वा जनकभाषितम्।
वत्स राम! धनुः पश्य इति राघवमब्रवीत्॥ ६७।१२

★ अयोध्याकाण्डम् ★

४. तु=तुष्टावास्य तदा वंशं प्रविश्य स विशां पतेः।
शयनीयं नरेन्द्रस्य तदासाद्य व्यतिष्ठत॥ १५।२०-२१

५. वं=वनवासं हि संख्याय वासांस्या भरणानि च।
भर्तारमनु गच्छन्त्यै सीतायै श्वशुरो ददौ॥ ४०।१४

६. रे=राजा सत्यं च धर्मश्च राजा कुलवतां कुलम्।
राजा माता पिता चैव राजा हितकरो नृणाम्॥ ६७।३४

७. णि=निरीक्ष्य च मुहूर्तं तु ददर्श भरतो गुरुम्।
उटजे राममासीनं जटामण्डल धारिणम्॥ ९९।२५

★ अरण्यकाण्डम् ★

८. यं=यदि बुद्धिः कृता द्रष्टुमगस्त्यं तं महामुनिम्।
अद्यैव गमने बुद्धिं रोचयस्व महायशाः ॥ ११ ४४-४५

९. भ=भरतस्यार्य्य पुत्रस्य श्वश्रूणां मम च प्रभो !।
मृगरूपमिदं दिव्यं विस्मयं जनयिष्यति ॥ ४३।१७

१०. र्गो=गच्छ शीघ्रमितो वीर ! सुग्रीवं तं महाबलम्।
वयस्यं तं कुरु क्षिप्रमितो गत्वाद्य राघव ॥ ७२।१७

★ किष्किन्धा काण्डम् ★

११. दे=देशकालौ भजस्वाद्य क्षममाणः प्रियाप्रिये।
सुखदुःख महाकाले सुग्रीव वशगो भव ॥ २२।२०

१२. व=वन्दितव्यास्ततः सिद्धास्तपसा वीतकल्मषा।
प्रष्टव्या चापि सीतायाः प्रवृत्तिर्विनयान्विता ॥ ४३।३२-३३

★ सुन्दर काण्डम् ★

१३. स्य=यस्य त्वेतानि चत्वारि वानरेन्द्र यथा तव।
स्मृतिर्धृतिर्मतिर्दाक्ष्यं सकर्मसु न सीदति ॥ १।१९८

१४. धी=धिङ् मामनार्यमसतीं याहं तेन विनाकृता।
मुहूर्तमपि रक्षामि जीवितं पाप जीविता ॥ २६।७

१५. म=मङ्गलाभिमुखी तस्य सा तदासीन्महाकपेः।
उपतस्थे विशालाक्षी प्रयता हव्यवाहनम् ॥ ५३।२६-२७

★ लङ्काकाण्डम् ★

१६. हि=हितं महार्थंमृदुहेतुसहितं व्यतीतकालायति स प्रतिक्षमम्।
निशम्यतद्वाक्यमुपस्थितज्वरःप्रसङ्गवानुत्तरमेतदब्रवीत् १०।७

१७. धि=धर्मात्मा रक्षसां श्रेष्ठः संप्राप्तोऽयंविभीषणः।
लङ्कैश्वर्यं ध्रुवं श्रीमानयं प्राप्नोत्यकंटकम् ॥ ४१।६६

१८. यो=यो वज्रपाताशनिसन्निपातान्न चुक्षुभेनापि चचाल राजा।
स राम बाणाभिहतोभृशार्तश्चचाल चापं च मुमोच वीरः ॥ ५६।१३९

१६. यो=यः स्वपक्षं परित्यज्य परपक्षं निषेवते।
स स्वपक्षे क्षयं प्राप्ते पश्चात् तैरवहन्यते ॥ ८७।१६

२०. नः=न ते ददृशिरे रामं दहन्तमरि वाहिनीम्।
मोहिताः परमास्त्रेण गान्धर्वेण महात्मना ॥ ६४।२६

२१. प्र=प्रहर्षेणावरुद्धा स व्याजहार न किञ्चन।
अब्रवीच्च हरिश्रेष्ठः सीतामप्रतिजल्पतीम् ॥ ११६।१५

★ उत्तरकाण्डम् ★

२२. चो=चालनात्पर्वतस्यैव गणादेवस्य कम्पिताः।
चचाल पार्वती चापि तदा श्लिष्टा महेश्वरम् ॥ १६।२६

२३. द=दाराः पुत्राः राष्ट्रं भोगाच्छादन भोजनम्।
सर्वमेवाविभक्तं नौ भविष्यति हरीश्वर ॥ ३४।४१

२४. यात्=यामेवरात्रिं शत्रुघ्नः पर्णशालां समाविशत्।
तामेवरात्रिं सीतापि प्रसूता दारक द्वयम् ॥ ६६।१

श्री राम जी की महत्त्वता

प्राचीन युगों में संस्कृत का अधिक बोल-बाला था और वेदों का अधिक प्रसार भी था। वेदों का सार गायत्री मंत्र है, इस को ही जपकर परात्पर परमात्मा को प्राप्त कर लेते थे। जब गायत्री मंत्र से रामायण की उत्पत्ति हुई, तब "रामायण शतकोटि अपरा" रामायण सौ करोड़ों में है। श्री शंकर जी उन सबको बितरण कर दिए। शेष दो अक्षर बचा इसको सार जान कर अपने हृदय में रख लिया।

"अहं जपामि देवेशि ! रामनामाक्षर द्वयम्।
श्रीरामस्य स्वरूपस्य ध्यानं कृत्वा हृदि स्थले ॥"

(इतिरुद्रयामलग्रन्थे)

अर्थ—श्री शंकर जी पार्वती से कह रहे हैं—कि हे देवेशि ! मैं श्री राम जी का स्वरूप हृदय में ध्यान करके दो अक्षर राम को सदा जपता रहता हूं।

"संतत जपत शम्भु अविनाशी, शिव भगवान् ज्ञान गुणराशी ॥"

सौ करोड़ में ३ से भाग देते चले जाइये, तब एक श्लोक शेष बचेगा। अनुष्टुप् छन्द में ३२ अक्षर होते हैं, इसको भी ३ से भाग दे दिया तो २ अक्षर शेष बचा, इस को ही श्री शंकर जी ने सार समझ कर अपने हृदय में रख लिया।

इस कराल कलिकाल में साधारण जनों के संस्कृत बोलने में एवं समझने में कठिन है। ब्रह्म गायत्री मन्त्र भी साधारण जनता के बोलने एवं समझने में कठिन है। ब्रह्मगायत्री मन्त्र में श्रीराम तत्त्व का वर्णन है। अतएव सब से सुगम एवं उच्चारण करने में सरल और समझने में श्रीराम ही हैं और नहीं, इन्हीं को जप एवं ध्यान करने से मनुष्य पर ब्रह्म परमात्मा राम को प्राप्त कर आवागवन रूपी इस संसार चक्र से छूट कर परमधाम को प्राप्त कर लेता है। इस कलिकाल में और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

श्री सीताराम समर्पणमस्तु
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

लेखक व सम्पादक
श्री राम नारायणदास शास्त्री
श्री शीतलदास जी का स्थान
अस्सी, काशी, वाराणसी